जैन
पथप्रदर्शक

ए-4, बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)

नैतिक एवं सामाजिक चेतना का अग्रदूत निष्पक्ष पाक्षिक

ढ़ाई अक्षर के आत्मा को जानलेना ही ज्ञान है, पाण्डित्य है।

– बिन्दु में सिन्धु, पृष्ठ – 25

वर्ष : 26, अंक : 3 | **सम्पादक :** पण्डित रतनचन्द भारिल्ल | आजीवन शुल्क : 251 रुपये
मई (प्रथम) 2003 | **प्रबन्ध सम्पादक :** पण्डित संजीवकुमार गोधा | वार्षिक शुल्क : 25/-, एकप्रति : 2/-

वेदी शिलान्यास महोत्सव सम्पन्न

बण्डा (सागर) : यहाँ श्री 1008 महावीर दिगम्बर जैन मंदिर में दिनांक 17 से 19 अप्रैल तक वेदी शिलान्यास महोत्सव एवं भगवान महावीर पंचकल्याणक विधान का आयोजन किया गया।

कार्यक्रम का उद्घाटन श्री बाबूलालजी जैन शाहगढ़ तथा विधान का उद्घाटन श्री अरविन्दकुमार निर्मलकुमार मोदी दलपतपुरवालों ने किया।

इस अवसर पर डॉ. उत्तमचन्दजी सिवनी के तीनों समय प्रवचनों के अतिरिक्त ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित गुलाबचन्दजी बीना, पण्डित निर्मलकुमारजी सागर एवं पण्डित अरुणकुमारजी मोदी सागर के प्रवचनों का लाभ मिला।

सम्पूर्ण कार्यक्रम बाल ब्र. जतीशचन्दजी शास्त्री सनावद, पण्डित अरुणकुमारजी मोदी सागर एवं पण्डित धर्मेन्द्रकुमारजी शास्त्री जयपुर के निर्देशन में सम्पन्न हुये।

विधि-विधान के सम्पूर्ण कार्य पण्डित सुबोधकुमारजी शास्त्री शाहगढ़, पण्डित अभिनयकुमारजी शास्त्री जबलपुर एवं पण्डित प्रयंकजी शास्त्री रहली ने सम्पन्न कराये। रात्रि में पण्डित अमितकुमारजी शास्त्री ने सांस्कृतिक कार्यक्रम सम्पन्न कराये।

अन्तिम दिन श्री छोटेलालजी कर्रापुर, सेठ सुखदयालजी देवडिया केसली एवं सेठ सुदर्शनजी द्वारा वेदी शिलान्यास किया गया।

आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर सानन्द सम्पन्न

गुना (म.प्र.) : यहाँ श्री वर्द्धमान दिगम्बर जिनमंदिर में श्री दिगम्बर जैन मुमुक्षु मण्डल द्वारा दिनांक 11 मार्च 03 से 12 अप्रैल 03 तक 31 दिवसीय आध्यात्मिक शिक्षण-शिविर का आयोजन किया गया।

इस अवसर पर बाल ब्र. कल्पनाबेन जयपुर द्वारा प्रतिदिन प्रात: गोम्मटसार कर्मकाण्ड, दोपहर निमित्तोपादान एवं रात्रि में मोक्षमार्ग प्रकाशक (उभयाभासी) विषयों पर कक्षायें ली गईं ।

गौरतलब है कि प्रत्येक कक्षाओं के अन्तर्गत करीब 50-60 व्यक्तियों ने लाभ लिया। सभी कक्षाओं की परीक्षा भी हुई, जिसमें प्रथम एवं द्वितीय पुरस्कार के अतिरिक्त सभी को सत्साहित्य प्रदान कर पुरस्कृत किया गया ।

शिविर में बालकों की संख्या में वृद्धि के साथ-साथ युवा महिलाओं की कक्षा भी प्रारंभ हुई तथा सभी ने जयपुर शिविर में सम्मिलित होने की स्वीकृति भी प्रदान की । **– बाबूलाल बांझल**

आत्मार्थी छात्रों को अपूर्व अवसर

श्री टोडरमल दिगम्बर जैन सिद्धान्त महाविद्यालय जयपुर का नया सत्र 15 जून, 2003 से प्रारंभ होने जा रहा है। महाविद्यालय में प्रवेश के इच्छुक जिन छात्रों ने अभी तक फार्म नहीं भेजें हैं, वे शीघ्र भेजे।

ध्यान रहे, महाविद्यालय में प्रवेश की प्रक्रिया 11 मई से 28 मई, 2003 तक टोडरमल स्मारक जयपुर में होनेवाले प्रशिक्षण शिविर में ही पूरी की जाती है; अत: प्रवेश के इच्छुक सभी छात्रों को इस शिविर में पूरे समय तक रहना अनिवार्य है।

स्थान अत्यन्त सीमित होने से बाद में आनेवाले विद्यार्थियों को प्रवेश मिलना संदिग्ध रहेगा।

शिविर का लाभ लेने हेतु आनेवाले साधर्मी मुमुक्षु भाई अपने आने की सूचना तुरन्त जयपुर कार्यालय भेजें, ताकि उनकी आवासादि की समुचित व्यवस्था की जा सके।

ब्र. माणिकचन्दजी भिसीकर नहीं रहे ..

श्री बाहुबली विद्यापीठ, कुम्बोज बाहुबली के संचालक एवं सन्मति (मराठी मासिक) पत्रिका के प्रधान सम्पादक ब्र. माणिकचन्दजी भिसीकर का स्वर्गवास दिनांक 20 अप्रैल, 03 को हो गया है। आप जैनदर्शन के वयोवृद्ध विद्वान थे। आपके देहावसान से जैन समाज की अपूरणीय क्षति हुई है।

आचार्य श्री समन्तभद्रजी महाराज द्वारा दक्षिण में पुनरुज्जीवित गुरुकुल शिक्षण प्रणाली के आप एक प्रमुख आधारस्तंभ थे। आपके मार्गदर्शन में ही विद्यापीठ का विकास हुआ और वह विद्यापीठ अनेक गुरुकुलों व विद्यालयों की शाखा प्रशाखाओं का वटवृक्ष बन गया।

विद्यापीठ के कुशल संचालन के साथ ही साथ आप तत्त्वज्ञान के मर्मज्ञ भी थे। सन्मति (मासिक) के सम्पादकियों में आपके अध्ययन की गहराई व मननशीलता दृष्टिगोचर होती है। तत्त्वज्ञान व अध्यात्म रुचि के फलस्वरूप ही आपका पण्डित टोडरमल स्मारक ट्रस्ट से अत्यन्त निकट व मधुर सम्बन्ध रहा। आपके मार्गदर्शन में संचालित गुरुकुलों में छात्रों को प्रेरणा देकर आप प्रतिवर्ष श्री टोडरमल महाविद्यालय में अध्ययन हेतु अनेक छात्रों को भेजते रहे हैं।

जैनधर्म के प्रचार को समर्पित ऐसे व्यक्तित्व का समाज सदैव ऋणी रहेगा। दिवंगत आत्मा शीघ्र ही अभ्युदय को प्राप्त हो - यही भावना है।

सम्पादकीय –

हरिवंशपुराण : एक अनुशीलन

29

– रतनचन्द भारिल्ल

(गतांक से आगे .....)

गुरुजी ने क्षुल्लक पुष्पदन्त को उत्तर देते हुये कहा ह्न विक्रिया ऋद्धि के धारक विष्णुकुमार मुनि से यह उपसर्ग दूर हो सकता है।

क्षुल्लक पुष्पदन्त ने तत्काल जाकर विष्णुकुमार मुनि को यह सब समाचार सुनाया और गुरु के कहे अनुसार उपसर्ग दूर करने की सामर्थ्य से अवगत कराया।

मुनि विष्णुकुमार को स्वयं ही ज्ञात नहीं था कि उन्हें ह्न विक्रिया ऋद्धि प्राप्त हो गई है। ज्ञानी संत लौकिक ऋद्धि-सिद्धि के लिए तप करते भी नहीं हैं; फिर भी तप का फल तो मिलता ही है। मुनि विष्णुकुमार ने ऋद्धि की परीक्षा हेतु अपनी भुजा फैलाकर देखी तो भुजा रुकावट बिना-निर्बाध पहाड़ों जैसी दीवारों को भी भेदती हुई बढ़ती ही चली गई। इससे उन्हें अपनी विक्रया ऋद्धि की प्राप्ति का विश्वास हो गया।

जिनशासन के भक्त, वात्सल्यमूर्ति मुनि विष्णुकुमार ने अपने पद भंग होने की परवाह न करके राजा पद्म के पास जाकर उससे कहा ह्न राज्य पाते ही तुमने यह क्या अनर्थ कर रखा है ? ऐसा कार्य तो रघुवंशियों में कभी हुआ ही नहीं। यदि कोई दुष्टजन तपस्वियों पर उपसर्ग करता है तो प्रथम तो उसे राजा के द्वारा ही दूर करना चाहिए। हे राजन ! जलती हुई अग्नि कितनी ही उग्र-ज्वलन्त क्यों न हो, जल के द्वारा तो शान्त हो ही जाती है न ! यदि जल से ही अग्नि भभकने लगे तो अग्नि को बुझाने का अन्य क्या उपाय बाकी बचेगा ? यदि राजा दुष्टों के दमन करने में समर्थ नहीं है तो राजनीति में उस राजा को ठूँठवत् नाममात्र का राजा कहा है। इसलिए अविवेकी बलि मंत्री को इस दुष्टकार्य करने से शीघ्र रोको। मित्र और शत्रुओं पर समभाव रखनेवाले मुनियों पर इसका यह द्वेष ? शीतलस्वभाव साधुओं को संताप पहुँचाना और राजा द्वारा मूकदर्शक बने रहने का फल जानते हैं आप? अरे ! अभी आपने साधुओं का आशीर्वाद ही देखा है, अभिशाप नहीं। यदि साधु ह्न कदाचित् अपनी साधुता छोड़कर क्रोधित हो जाय तो भस्म भी कर देता है। यदि साधुओं पर अत्याचार हुआ तो कदाचित् साधु अग्नि के समान दाहक भी हो जाते हैं। इसलिए हे राजन ! तुम्हारे ऊपर भी कोई वज्रपात न हो जाय, उसके पहले ही बलि के इस कुकृत्य के प्रति की जाने वाली अपनी उपेक्षा को दूर करो।

राजा पद्म ने नम्र होकर कहा ह्न हे नाथ ! मैंने बलि के लिए सात दिन का राज्य देने का वचन दे दिया है। इस कारण यह मेरे अधिकार की बात नहीं है। हे भगवन् ! आप स्वयं ही इस उपसर्ग से साधुओं को बचाने का जो भी उपाय कर सकते हों तो अवश्य करें आपके प्रभाव से एवं चातुर्य से बलि अवश्य ही आपकी बात स्वीकार करेगा।

राजा द्वारा असमर्थता व्यक्त करने पर मुनि विष्णुकुमार स्वयं बलि के पास गये और बलि से कहा ह्न हे भले आदमी तुम अधर्म को बढ़ाने वाला यह निन्दित कार्य क्यों कर रहे हो ? मात्र तप में ही लीन रहने वाले इन मुनियों ने तुम्हारा ऐसा क्या अनिष्ट कर दिया ? जिससे तुमने उच्च होकर भी नीच की तरह यह कुकृत्य किया ? यदि शान्ति चाहते हो तो शीघ्र ही इस ह्न उपसर्ग का निवारण करो।

बलि ने कहा ह्न यदि ये मेरे राज्य से चले जाएँ तो ही उपसर्ग दूर हो सकता है, अन्यथा नहीं।

विष्णुकुमार मुनि ने कहा ह्न ये सब ध्यानस्थ हैं, इसकारण ये बिना उपसर्ग हटाये एक पग (डग) भी नहीं चल सकते। ये ह्न अपने शरीर का त्याग भले ही कर देंगे, पर अपने ध्यान को नहीं तोड़ सकते, अपने धर्म का उलंघन नहीं कर सकते; अतः इन्हें ठहरने के लिए तुम मुझे मात्र तीन डग (पग) भूमि देना स्वीकार करो ! अपने आपको अत्यन्त कठोर मत करो। मैंने अभी तक किसी से कभी कोई याचना नहीं की; फिर भी इन मुनियों के ठहरने के निमित्त मैं तुमसे थोड़ी सी भूमि की याचना करता हूँ; अतः मेरी इतनी-सी बात स्वीकार करो।

मुनि विष्णुकुमार की बात को सशर्त स्वीकृत करते हुए बलि ने कहा कि ''यदि ये उस सीमा के बाहर एक डग का भी उल्लंघन करेंगे तो दण्डनीय होंगे, फिर इसमें मुझे दोष मत देना; क्योंकि लोक में मनुष्य तभी आपत्ति में पड़ता है जब वह अपने वचन से च्युत होता है।''

इसके बाद उस दुष्ट बलि को वश करने के लिए विष्णुकुमार मुनि ने विक्रिया ऋद्धि से अपने शरीर को इतना बड़ा बना लिया कि वह ज्योतिपटल को छूने लगा। फिर उन्होंने एक डग मेरु पर रखी, दूसरी डग मानुषोत्तर पर और तीसरी डग के लिए अवकाश न मिलने से आकाश में ही घूमती रही। उस समय विष्णुकुमार मुनि के प्रभाव से तीनों लोकों में क्षोभ मच गया। देवगण आश्चर्यचकित होकर 'यह क्या' 'यह क्या'? ऐसे शब्द बोलने लगे। गंधर्व देव अपनी-अपनी देवी पत्नियों के साथ उन मुनिराजों के समीप मनोहर गीत गाने लगे। देवगण कह रहे थे ह्न हे प्रभो ! आपके तप के प्रभाव से आज तीनों लोक चल-विचल हो उठे हैं। यह सब देखकर 'बलि' भी घबड़ा गया, किंकर्तव्य विमूढ़-सा हो गया।

तदनन्तर धीर-वीर विद्याधरों और आकाश में विचरण करनेवाले चारण ऋद्धिधारक मुनियों ने जब मुनि विष्णुकुमार को शान्त किया तब धीरे-धीरे वे अपनी विक्रिया का संकोच कर स्वभावस्थ हो गये। उसी समय देवों ने शीघ्र ही मुनियों का उपसर्ग दूर कर दुष्ट बलि को बाँध लिया और उसे दण्डित कर देश से दूर निकाल दिया।

इसप्रकार जिनशासन के प्रति वात्सल्य प्रगट करते हुए मुनि विष्णुकुमार ने गुरु के पास जाकर प्रायश्चित्त द्वारा विक्रिया की शल्य को त्याग दिया और घोर तप द्वारा घातियाा कर्मों का क्षय करके केवलज्ञान प्राप्त किया।

जो मनुष्य विष्णुकुमार का धर्मवात्सल्य, अंकपनाचार्य की निश्चलता तथा श्रुतसागर के प्रायश्चित्त के आदर्श से, अपने परिणामों को निर्मल करते हैं, वे सातिशय पुण्य के साथ परम्परा मुक्ति को भी प्राप्त करते हैं।''

कहान-संदेश

धर्मी की मंगल भावना

12

एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता तो है ही नहीं; अपितु स्पर्श भी नहीं करता। प्रत्येक द्रव्य स्वतंत्र है। प्रत्येक द्रव्य की पर्याय क्रमबद्ध होती है। आत्मा मात्र ज्ञायक परमानन्द स्वरूप है। यह भगवान सर्वज्ञदेव की दिव्यध्वनि की पुकार है। ऐसी अध्यात्म की सूक्ष्म वस्तु इस काल जिन्हें अन्तर में रुचिपूर्वक परिणमित हो जाती है – ऐसे जीवों को एक-दो-चार भव ही होते हैं, अधिक नहीं होते। इस काल में केवली, अवधिज्ञानी या मन:पर्ययज्ञानी नहीं हैं, आश्चर्य के कारण ऐसे इन्द्रादि देवों का आगमन नहीं होता, चक्रवर्ती आदि कोई चमत्कारिक वस्तुएँ नहीं हैं; तथापि यह आध्यात्मिक सूक्ष्मतत्त्व अंतर में रुच जाता है, उसके भाव विशेष हैं; इसलिए उसके भव अधिक नहीं होते।

भूल तो अनादि की है, उसका कोई आश्चर्य नहीं है। पलट जाना, उसका आश्चर्य है। तीर्थंकर के आत्मा ने पूर्वभव में केवलियों की निन्दा की थी; उसमें कोई नवीनता नहीं है। उसे भूल जाना और बदल जाना उसकी विशेषता है।

जिसमें से केवलज्ञान की अनन्त पर्यायें प्रवाहित हों इतना वह है। एक सिद्धपर्याय जितना नहीं है। मुझमें तो अनन्त भगवान की अनन्त पर्यायें विद्यमान हैं – इतना मैं हूँ।

सर्वप्रथम तो मुझमें शरीर-संसार-विकल्प है ही नहीं – ऐसा निर्णय करके अनुभव कर लेना चाहिए।

सर्वज्ञ इस आत्मा को ज्ञायकस्वभावी जीवतत्त्व जानते हैं, पुण्य-पाप के भाव होते हैं, उन्हें आस्रवतत्त्व जानते हैं और शरीरादिक को अजीवतत्त्व जानते हैं – इसप्रकार जब अपने ज्ञान को भी भिन्न-भिन्नपने जानता है, तब भेदज्ञान होता है।

प्रवचनसार में कहते हैं कि शुभाशुभ दोनों भाव दु:खरूप हैं। अशुभ के फल में नरक और शुभ के फल में स्वर्ग के भोग प्राप्त होते हैं ; परन्तु उन भोगों में लक्ष्य जाये, वह भाव भी अशुभ होने से दु:ख है; इसलिए अशुभ का फल नरक और शुभ का स्वर्ग, वहाँ भी दु:ख ही है, तब शुभ-अशुभ के फल में फेर कहाँ रहा ? वे दोनों दु:ख के कारण हैं । तो फिर शुभ को अच्छा कैसे कहा जाए ? प्रभु ! जिसके फल में दु:ख है – ऐसा शुभ तुझे रुचता क्यों है?

देव-शास्त्र-गुरु कहते हैं कि हम तेरे ज्ञान के ज्ञेय हैं ; इसलिये तू ज्ञेय-निष्ठता से हट जा। हमारी वाणी भी ज्ञेय है और ज्ञेय की तत्परता वह संसार है। ज्ञायक में तत्परता कर और हमारे प्रति जो तत्परता है, उसे हटा दे।

करुणापूर्वक कहा है कि हे मूढमति ! हम जिन पुण्य-पाप भावों को अचेतन कहते हैं, जड़ पुद्गल कहते हैं, उन्हें तू आत्मा मानता है; इसलिये तू बड़ा अपराधी है। जा, नरक निगोद में, जा पुद्गल की खान में ! चैतन्य की खान में नहीं जायेगा।

प्रश्न : पर्याय उस काल की सत् है, निश्चित है, ध्रुव है – ऐसा कहने का क्या प्रयोजन है ?

उत्तर : पर्याय के ऊपर से लक्ष्य हटाकर ध्रुवद्रव्य की ओर ढलने का प्रयोजन है। पर्याय उस काल की निश्चित है, ध्रुव है – ऐसा बताकर उसपर से लक्ष्य हटाकर ध्रुवद्रव्य पर लक्ष्य कराने का प्रयोजन है। पर्याय निश्चित है, ध्रुव है; इसलिये उससमय की पर्याय सत् होने से आगे-पीछे नहीं हो सकती – ऐसा जाने तो दृष्टि द्रव्य पर जायेगी और द्रव्य पर लक्ष्य जाने से वीतरागता होगी। अरे ! ऐसी बातें करोड़ों रुपये देने पर भी नहीं मिल सकती। अहाहा ! जिसे जानने पर वीतरागता हो, उसका मूल्य तो कितना होगा?

मैं स्वभाव से ही ज्ञायक होने के कारण विश्व के साथ मेरा मात्र ज्ञेय-ज्ञायक संबन्ध है; कर्ता-कर्म या स्व-स्वामी आदि कोई संबन्ध है ही नहीं। कर्म ज्ञेय और मैं ज्ञायक हूँ। शरीर की निरोग या रोग चाहे जैसी भी अवस्था हो, वह मुझे अच्छी या बुरी नहीं है; परन्तु वह तो मात्र ज्ञेयरूप है और मैं तो मात्र ज्ञायक हूँ। अरे ! विकार हो वह भी ज्ञेय है और मैं ज्ञायक हूँ। तीनलोक के नाथ विनय करने योग्य हैं और मैं विनय करनेवाला हूँ – ऐसा भी नहीं है। तीर्थंकर देव भी विश्व में ज्ञेय में आते हैं और मैं ज्ञायक हूँ। इसके सिवा विश्व में मेरा स्व और मैं उसका स्वामी – ऐसा स्व-स्वामी संबन्ध नहीं है। मैं कर्ता और वे मेरे कर्म – ऐसा कर्ता-कर्म संबन्ध भी विश्व के साथ नहीं है। मेरा तो एक ज्ञेय-ज्ञायक मात्र संबन्ध ही है और वह भी व्यवहार ही है। परमार्थ से तो मैं ही ज्ञाता, ज्ञान और ज्ञेय हूँ; इसलिये मुझे किसी के प्रति ममत्त्व नहीं है।

नर-नारकादि जीव के विशेष अजीव, पुण्य, पाप, आस्रव, बन्ध, संवर, निर्जरा तथा मोक्ष – इन नव तत्त्वों से एक टंकोत्कीर्ण ज्ञायकभाव द्वारा अत्यन्त भिन्न होने के कारण मैं शुद्ध हूँ। अहाहा ! साधक-बाधक की पर्याय से आत्मा को अत्यन्त भिन्न कहा। शरीरादि से तो अत्यन्त भिन्न है ही, पुण्य-पापादि से भी अत्यन्त भिन्न है ही; संवर-निर्जरा-मोक्ष की शुद्ध निर्मल पर्याय के व्यावहारिक भावों से भी मैं एक टंकोत्कीर्ण ज्ञायकभाव द्वारा अत्यन्त भिन्न होने से शुद्ध हूँ। अहाहा ! समयसार की 38 वीं गाथा में तो संवर-निर्जरा-मोक्ष की शुद्ध निर्मल पर्याय के व्यवहारिक भावों से भी आत्मा को अत्यन्त भिन्न कहकर दिगम्बर सन्तों ने अंतर की पेट की बातें खोलकर रख दी हैं। ऐसी बातें अन्यत्र कहीं नहीं हैं। अहाहा ! जगत के महाभाग्य हैं कि ऐसी बातें रह गयी हैं।

भीतर तो ज्ञायक प्रभु है, उसमें दया-दान-व्रत के परिणाम नहीं हैं; परन्तु जिसमें प्रमत्त या अप्रमत्तदशा भी नहीं है – ऐसा ज्ञायकभाव है। ज्ञाता...ज्ञाता...ज्ञाता...चैतन्य...चैतन्य स्वभाव ज्ञायकभाव है, सम्यग्दर्शन का विषय ज्ञायकभाव है। वह ज्ञायकभाव अप्रमत्त या प्रमत्त नहीं है। तेरहवाँ चौदहवाँ गुणस्थान भी ज्ञायकभाव में नहीं है। जैसे तेल की बूँद पानी के दल में प्रवेश नहीं कर सकती; उसीप्रकार ज्ञायकदल में प्रमत्त-अप्रमत्तदशा नहीं है; क्योंकि ज्ञायकभाव प्रमत्त-अप्रमत्त नहीं होता।

भगवान कहते हैं कि प्रभु ! तेरे और हमारे आत्मा की जाति में कोई फेर नहीं है। इतना ही फेर है कि तूने अपना स्वरूप प्रगट नहीं किया; इसलिये नि:शंकरूप से अपने परमात्मा समान आत्मा की निभ्रान्त-भ्रान्ति रहित भावना कर ! जानना...जानना – यह ज्ञानशक्ति की असीमता, अचिन्त्यता, अमापता है, वही मैं हूँ। ज्ञायक के साथ रहा हुआ आनन्द भी मैं ही हूँ। अतीन्द्रिय, अपार एवं पूर्ण आनन्द मेरा ही स्वरूप है। ऐसे ज्ञान-आनन्द स्वरूप आत्मा की दृष्टि करने पर – सत्यस्वरूप का स्वीकार करने पर पर्याय में जो सत्यदशा प्रगट होती है, वही वास्तव में आत्मा का निजधर्म है।

अध्यात्म गंगा प्रतियोगिता का सही हल

पर्युषण पर्व-2002 के अवसर पर अ. भा. जैन युवा फैडरेशन द्वारा आयोजित 'अध्यात्म गंगा प्रतियोगिता' का परिणाम अप्रैल (प्रथम)'03 अंक में घोषित किया जा चुका है। प्रतियोगिता में चारों अनुयोगों से संबंधित 201 प्रश्न पूँछे गये थे ; जिसमें सम्पूर्ण भारत से कुल 3421 उत्तर प्रतियाँ प्राप्त हुईं। सभी विजेताओं को पुरस्कार उनके पते पर भेजे जा चुके हैं। सही उत्तर जानने की जिज्ञासा से अनेकों मुमुक्षुओं के पत्र हमें प्राप्त हुये हैं; उनके लाभार्थ हम उन्हें यहाँ प्रकाशित कर रहे हैं। प्रकाशन में पूर्ण सावधानी रखी है, इन उत्तरों के अतिरिक्त भी यदि आगम में कोई अन्य उत्तर मिलता हो तो उसे भी प्रामाणिक मानें।

1. णमोकार मंत्र **प्राकृत** भाषा में है।
2. गुणों के समूह को **द्रव्य** कहते हैं।
3. **मान** का नाम पाँच पापों में नहीं है।
4. बीसवें तीर्थंकर का नाम **मुनिसुव्रत** है।
5. पराई माँ-बहिन को बुरी दृष्टि से देखना **कुशील** है।
6. आचार्य वादीभसिंह रचित छत्रचूड़ामणि ग्रन्थ में कुल **747** श्लोक हैं।
7. आचार्य वादीभसिंह रचित छत्रचूड़ामणि ग्रन्थ में **जीवन्धरस्वामी** का चरित्र-चित्रण है।
8. 'उत्तम क्षमा' में क्षमा के साथ लगा उत्तम शब्द **सम्यग्दर्शन** का सूचक है।
9. मुनिराज **समस्त परिग्रह के** त्यागी होते हैं।
10. तप का भेद **संयम** नहीं है।
11. धरसेनाचार्य ने स्वप्न में **दो बैल** देखे थे।
12. राजा श्रेणिक के ससुर का नाम **चेटक** था।
13. सम्यग्ज्ञान के बिना किए गए तप को **बालतप** कहते हैं।
14. पाँच इन्द्रियों के कुल **27** विषय हैं।
15. पंचम गति **मोक्ष को** कहते हैं।
16. वक्ता के अभिप्राय को **नय** कहते हैं।
17. भारत के बूचड़खाने **महावीर जयन्ती पर** बंद रहते हैं।
18. लव एवं कुश **पावागढ़ से** मोक्ष गये।
19. गौतम गणधर **गुणावा से** मोक्ष गये।
20. देशभूषण व कुलभूषण **कुंथलगिरि** से मोक्ष गये।
21. एयरकण्डीशनर होटल में कोई व्यक्ति पेप्सी पी रहा हो इसमें **पाँचों इन्द्रियों के** विषयों की पूर्ति हुई।
22. जिस घर में जिनवाणी नहीं हो उसे **श्मशान** कहते हैं।
23. हम सम्मूर्छन जीव के रूप में सिद्धशिला पर **अनन्त बार** गये हैं।
24. सर्वार्थसिद्धि के देवों की आयु **33 सागर** होती है।
25. स्वयंभू रमण समुद्र के महामच्छ की अवगाहना **1000 योजन** है।
26. सीमंधर भगवान की आयु **1 कोटि पूर्व** है।
27. बहरूपिये से **ब्रह्मगुलाल** मुनि बने।
28. पाप **पाँच** होते हैं।
29. **वासुपूज्य** के पाँचों कल्याणक एक ही स्थान पर हुए थे।
30. चौबीस तीर्थंकरों के कुल **1452** गणधर हुये।
31. आचार्य अकलंक-निकलंक जब बौद्ध विद्यापीठ में पढते थे, उस समय भगवान की मूर्ति को लांघने के लिए **जनेऊ** डाला था।
32. वैमानिक देवों के **2** भेद हैं।
33. विग्रहगति के **4** भेद हैं।
34. आचार्य अकलंकदेव **महाराष्ट्र** प्रान्त के थे।
35. विदेहक्षेत्र में **800** म्लेच्छ खण्ड होते हैं।
36. सीमन्धरस्वामी की अवगाहना **500 धनुष** है।
37. अग्रिमित्र की पर्याय से महावीर भगवान का जीव **माहेन्द्र स्वर्ग में** गया।
38. नारद **9** होते हैं।
39. रावण का वध **लक्ष्मण ने** किया था।
40. रुद्र **11** होते हैं।
41. वैज्ञानिक डॉ. जगदीशचंद्र वसु के अनुसार पानी की एक बूँद में **36,450** जीव होते हैं।
42. त्रेसठ शलाका पुरुष **चतुर्थ काल में** होते हैं।
43. शान्तिनाथ **3** पद के धारी थे।
44. अरहंत भगवान **18** दोषों से रहित होते हैं।
45. ध्यान के **4** भेद होते हैं।
46. प्रथमानुयोग में पदों की संख्या **5000** है।
47. वर्तमान में सीमंधर स्वामी **पुण्डरीकिणीपुरी में** विद्यमान हैं।
48. ढाईद्वीप में **850** म्लेच्छ खण्ड हैं।
49. तीस चौबीसी के कुल **720** तीर्थंकर हैं।
50. जम्बूद्वीप में ऐरावत क्षेत्र के भविष्यकालीन प्रथम तीर्थंकर **सिद्धार्थ** होंगे।
51. पूर्व धातकीखंड के ऐरावत क्षेत्र के भूतकाल के आठवें तीर्थंकर **निर्घंटिक** थे।
52. भगवान के शरीर में **1008** लक्षण होते हैं।
53. भगवान की वाणी **अर्धमागधी** है।
54. प्रायश्चित्त तप **9** होते हैं।
55. धर्म के लक्षण **10** होते हैं।
56. आचारांग में **18000** पद होते हैं।
57. मध्यलोक में **458** अकृत्रिम जिनालय हैं।
58. धातकीखंड में कुल **158** जिनालय हैं।
59. सूत्रकृतांग में पदों की संख्या **36,000** है।
60. ढाईद्वीप में **398** अकृत्रिम जिनालय हैं।
61. आदिनाथ की ऊँचाई **500 धनुष** थी।
62. स्वाध्याय के **5** प्रकार हैं।
63. उत्तरपुराण के रचयिता **जिनसेन/गुणभद्र** हैं।
64. केशलोंच के **5** प्रकार हैं।
65. प्रद्युम्नकुमार **गिरनार से** मोक्ष गये।
66. तत्त्वार्थसूत्र में सूत्रों की संख्या **357** है।
67. कर्मप्रकृति ग्रन्थ के कर्ता का नाम **नेमिचन्द्र** है।
68. 363 में अज्ञानवादियों के **67** मत प्रचलित हैं।
69. बृहद्-द्रव्यसंग्रह के रचयिता **नेमिचन्द्र सिद्धान्त चक्रवर्ती** हैं।
70. वादिराज आचार्य के संघ का नाम **सेनसंघ** था।
71. **शाकटायन न्यास** देवनन्दि पूज्यपाद का ग्रन्थ नहीं है।
72. अष्टसहस्री ग्रन्थ की भाषा **संस्कृत** है।
73. **पण्डित बनारसीदासजी** ने अपने ही घर से सामान ले जाने वाले चोरों की सहायता की थी।
74. एक त्रसरेणु में **8** परमाणु होते हैं।
75. भगवान की माताएँ होती ही नहीं हैं।
76. महावीर भगवान के समवशरण में मुक्ति प्राप्त करनेवाले **4400** मुनिराज थे।
77. **शिरपुर** सिद्धक्षेत्र नहीं है।
78. सम्मेदशिखर पर कुल **25** टोंक हैं।
79. चतुर्थकाल के अन्त में मोक्ष प्राप्त करनेवाले **महावीर** थे।
80. चन्द्रप्रभ के प्रमुख गणधर **दत्त** थे।
81. अभिनन्दननाथ के प्रमुख श्रोता **मित्रभाव** थे।
82. इस कर्मयुग में सर्वप्रथम मोक्ष जानेवाले महापुरुष **अनन्तवीर्य** थे।
83. उत्तम अवगाहना में **बाहुबली का** उदाहरण आता है।
84. आचार्य परमेष्ठी के मूलगुण **36** होते हैं।
85. शुक्लध्यान के **4** भेद हैं।
86. मनुष्यगति में सम्यग्दर्शन की योग्यता **8बर्ष बाद** प्राप्त होती है।
88. स्थावर जीवों के **5** भेद हैं।
89. पुरुषार्थ के **4** भेद हैं।
90. लक्ष्मण की पत्नी का नाम **विशल्या** था।
91. एक बार णमोकार मंत्र बोलते हुए **3** श्वासोच्छ्वास होना चाहिए।
92. सीता ने रावण के यहाँ रहकर लगातार **11** उपवास किये थे।
93. विशल्या **द्रोणमेघ की** पुत्री थी।
94. जम्बूद्वीप में **34** कर्मभूमियाँ हैं।
95. समवशरण की सभा **गोलाकार** होती है।
96. महावीर स्वामी को प्रथम आहार **राजा कूल ने** दिया था।
97. आचार्य कुन्दकुन्द पूर्व जन्म में **ग्वाला** थे।
98. कषाय की तारतम्यता से जो भेद पड़ते हैं, उसे **लेश्या** कहते हैं।

99. मैनासुंदरी के पिता **महीपाल/पुहुपाल** थे ।
100. प्रद्युम्नकुमार की माता का नाम **रुक्मणी** था।
101. दशलक्षण पर्व वर्ष में **3 बार** आते हैं ।
102. रिकार्ड जोड़ने-तोड़ने में **अज्ञानी** मस्त है ।
103 अपरिग्रह रूप उत्कृष्ट दशा **नग्नदिगम्बर की** है।
104. आचार्य कुन्दकुन्द के अतिरिक्त **पूज्यपाद मुनि** विदेहक्षेत्र गये थे ।
105. जीवविपाकी प्रकृतियाँ **78** हैं ।
106. तत्त्वार्थसूत्र व नियमसार में मनुष्यों के **दो** भेद तथा भगवती आराधना व गोम्मटसार में **चार** भेद हैं।
107. 'सज्जनचित्तवल्लभ' के रचयिता **मल्लिषेण** हैं ।
108. उपसर्ग केवली के रूप में **पार्श्वनाथ** प्रसिद्ध हुए ।
109. इस समय **विदेहक्षेत्र से** मोक्ष जा सकते हैं।
110. पंचमकाल में कुंडलपुर से मोक्ष जानेवाले अंतिम केवली **श्रीधर केवली** हैं ।
111. 'संसार वृक्ष' में हाथी **काल का** प्रतीक है ।
112. **आ. समन्तभद्र** आद्यस्तुतिकार हैं।
113. गोम्मटसार ग्रन्थ का अपरनाम **पंचसंग्रह** है ।
114. भगवान महावीर से राजा श्रेणिक ने **60 हजार** प्रश्न पूँछे थे ।
115. ढाई द्वीप में स्थाई भोगभूमियाँ **30** हैं ।
116. तेईसवें कामदेव **सिद्धवरकूट से** मोक्ष गये ।
117. **वरदत्त मुनि के** शरीर में रुई लपेटकर आग लगा दी गई ।
118. 7वें नरक से निकलकर जीव **क्रूर पशु** होता है।
119. पुण्य प्रकृतियाँ **68** हैं ।
120. अधोलोक में असुरकुमार देवों के भवनों में **64 लाख** अकृत्रिम जिन चैत्यालय हैं।
121. कुम्हार का ऊँचे-नीचे वर्तन बनाना **गोत्र** कर्म का उदाहरण है।
122. छठे गुणस्थान में **गो.कर्मकाण्ड व चर्चाशतक के अनुसार 63** कर्म प्रकृतियों का बन्ध होता है।
123. दूसरे गुणस्थान से निकलकर जीव **नरक गति** को प्राप्त नहीं होता है।
124. सौधर्म इन्द्र की सेना **7** प्रकार की होती है।
125. चौथे काल में **6** संहनन को धारण करने वाले जीव हो सकतें हैं ।
126. जिनके कोई भी संहनन नहीं होता है - ऐसा **एकेन्द्रिय** जीव है ।
127. सम्यक्रत्नत्रय प्रकट करने का उपाय **भेदविज्ञान** है।
128. श्रेयांसगिरि क्षेत्र **पन्ना में** आता है ।
129. चरणानुयोग चूलिका **प्रवचनसार** ग्रन्थ में है।
130. एक द्रव्य का दूसरे द्रव्य में **अत्यंताभाव** है।
131. 'रत्नप्रभा'पहले **नरक का** नाम है ।
132. नामकर्म का उत्कृष्ट स्थिति-बन्ध **20 कोड़ाकोड़ी** सागर है।
133. सर्वघाति प्रकृतियाँ **21** हैं ।
134. क्षेत्र-विपाकी प्रकृतियाँ **4** हैं।
135. अढाई द्वीप में कुल **15** कर्मभूमियाँ हैं।
136. समन्तभद्रस्वामी का जन्म **उरगपुर में** हुआ था।
137. देशनालब्धि के **5** अंग होते हैं ।
138. जैनेन्द्रव्याकरण के रचयिता **आ.पूज्यपाद** हैं।
139. स्याद्वाद मंजरी के रचयिता **हेमचन्द्राचार्य** हैं।
140. मोहनीय कर्म की उत्कृष्ट स्थिति का आबाधा-काल **7 हजार वर्ष** है ।
141. अमृताशीति के रचयिता **योगीन्दुदेव** हैं।
142. परमशुद्ध निश्चयनय से आत्मा **शुद्ध** है ।
143. हमें शरीर **नामकर्म से** मिलता है।
144. आटे का मुर्गा बनाकर **यशोधर ने** अनेक दुःख भोगे ।
145. चन्दनबाला को **वृषभदास ने** खरीद लिया था ।
146. आतप **सूर्य के विमान में** होता है।
147. भावी तीर्थंकरों में प्रथम तीर्थंकर का नाम **महापद्म** है ।
148. सबसे बड़ी अवगाहना **महामत्स्य की** होती है।
149. त्रस जीव **त्रसनाड़ी में** पाये जाते हैं।
150. वारूणी धारणा **धर्मध्यान** के अर्न्तगत आता है ।
151. **मानतुंगाचार्य को** जंजीर से बाँधा गया था।
152. भस्मकव्याधि **समन्तभद्राचार्य को** हुई थी।
153. **पूज्यपादाचार्य को** भक्ति के प्रभाव से नेत्रों में ज्योति आ गई ।
154.स्थितिकरण अंग में **वारिषेणमुनि** प्रसिद्ध हुए।
155. नित्यनिगोद का दूसरा नाम **पंचगोलक** है ।
156. चंद्रगुप्त की समाधि **चन्द्रगिरि** हुई ।
157. **अभयकुमार एवं भीष्म ने** अपने पिता का विवाह करवाया था ।
158. भगवान महावीर के 2600 वें जन्मोत्सव के दिन **शुक्रवार** था ।
159. **कार्तिकेयस्वामी** के नाना व पिता एक ही थे।
160. **जीवन्धरकुमार** ने मरणासन्न कुत्ते को णमोकार मंत्र सुनाया ।
161. नन्दीश्वर द्वीप में **5616** अकृत्रिम प्रतिमाएँ हैं ।
162. आजीवन हरी सब्जी का त्याग **ब्र. रायमल्लजी ने** किया था ।
163. **धनञ्जय कवि ने** गन्धोदक से अपने पुत्र का विष उतार दिया।
164. **अभयकुमार ने** अपने पिता के लिए स्त्री का हरण किया ।
165. खरदूषण की पत्नी का नाम **चन्द्रनखा** था।
166. गोम्मटसार जीवकाण्ड, कर्मकाण्ड, लब्धिसार एवं क्षपणासार की टोडरमलजी ने **सम्यग्ज्ञान चन्द्रिका** नाम से टीका लिखी ।
167. ब्राह्मण मत की स्थापना **भरतचक्रवर्ती ने** की।
168. सबसे ऊँची खड़गासन प्रतिमा **बड़वानी/ वावनगजा** पर है ।
169. वाजनी शिला **सोनागिर** में स्थित है ।
170. कुमार महावीर ने **शाल** वृक्ष के नीचे दीक्षा ली ।
171. भ. महावीर के जीव को तीर्थंकर प्रकृति का बंध **राजा नन्द** की पर्याय में हुआ।
172. उपाध्याय परमेष्ठी की मूर्ति **देवगढ़** में है ।
173. स्त्रियाँ **छठे** नरक तक जा सकती हैं ।
174. तीर्थंकर **नेमिनाथ** का चिन्ह दो इन्द्रिय है ।
175. सुमेरू पर्वत की जड़ **चित्रा** पृथ्वी में है ।
176. पार्श्वनाथ की सहस्रफणी प्रतिमा **बीजापुर** में है।
177. अकलंक ने बौद्धों को **तारादेवी/चक्रेश्वरी देवी** के माध्यम से जीता था ।
178. पंचम काल में मनुष्य अधिक से अधिक **16 वें** स्वर्ग तक जा सकता है।
179. 'लघुतत्त्वस्फोट' नामक ग्रन्थ का अपरनाम **शक्तिमणित कोष** है ।
180. **आ**दिनाथ से **म**हावीर = आम में 24 तीर्थंकरों का समावेश हो जाता है ।
181. एक जीव के एक काल में मनुष्यगति की अपेक्षा अधिक से अधिक **50** भाव हो सकते हैं।
182. आठवीं पृथ्वी का नाम **ईशत्प्राग्भार** है ।
183. 148 कर्म प्रकृतियों में से **120** प्रकृतियाँ ही बन्धन योग्य हैं ।
184. सिद्धशिला का विस्तार **45 लाख योजन** है।
185. जिनशतक के रचयिता **समन्तभद्राचार्य** हैं ।
186. मुनिराज का आहार **32** ग्रास प्रमाण होता है।
187. 20 कोड़ाकोड़ी सागर **कल्पकाल** का प्रमाण है ।
188. समयसार में कुल **415** गाथाएँ हैं ।
189. महापुराण के कर्त्ता **आचार्य जिनसेन व आचार्य गुणभद्र** हैं।
190. मुक्तागिरि का दूसरा नाम **मेंढ़गिरी** है ।
191. 'ओम्' में **पाँचों** परमेष्ठी समाहित हैं।
192. नित्यनिगोद से निकला जीव पुन: **नित्यनिगोद** नहीं जाता है।
194. **अनंतमती** नि:कांक्षित अंग में प्रसिद्ध हुईं ।
195. पण्डित टोडरमलजी के अपूर्ण ग्रन्थ का नाम **मोक्षमार्गप्रकाशक** है ।
196. **धवल सेठ** ने श्रीपाल को समुद्र में धक्का दिया।
197. भूतबली-पुष्पदंत के गुरू **धरसेनाचार्य** थे ।
198. **क्षायिकभाव** के बिना कोई केवली नहीं होता।
199. सबसे बड़ी पद्मासन प्रतिमा **गोपाचल** पर्वत पर स्थित है ।
200. णमोकार मंत्र सर्वप्रथम **षट्खण्डागम** ग्रन्थ में लिखा गया ।
201. एक ऐसा अभक्ष्य पदार्थ 'जो राजा के राज में नहीं, माली के बाग में नहीं, खाओ तो स्वाद नहीं, फोड़ो तो गुठली नहीं' = **ओला**

तत्त्वचर्चा

समयसार का सार 66

गतांक से आगे

– डॉ॰ हुकमचन्द भारिल्ल

अब बंधाधिकार आरंभ होता है। इसमें कर्मबंध के मूल कारण की मीमांसा होगी। इस अधिकार की आरंभिक गाथाओं में एक उदाहरण के माध्यम से इस बात को स्पष्ट किया गया है।

एक व्यक्ति अपने शरीर में तेलादि चिकने पदार्थ लगाकर बहुत धूल वाले स्थान में तलवार आदि हथियारों से व्यायाम करता हुआ ताड़, तमाल, केला, बांस व अशोकादि वृक्षों को छेदता है, भेदता है, सचित्त–अचित्त पदार्थों का घात करता है और धूल धूसरित हो जाता है, धूल से लिप्त हो जाता है।

उक्त सन्दर्भ में विचार करने की बात यह है कि उक्त व्यक्ति को जो रजबंध (धूल का चिपटना) हुआ है; उसका मूल कारण क्या है ?

यदि हम गहराई में जाकर विचार करें तो इसी निष्कर्ष पर पहुँचेंगे कि रजबंध का एकमात्र कारण तेलादि पदार्थों की चिकनाहट ही है; धूलभरा स्थान और हथियारों से किया जानेवाला व्यायामादि नहीं; क्योंकि यदि उसके शरीर में तैलादि चिकने पदार्थ का लेप नहीं होता तो उसे रजबंध भी नहीं होता।

इसीप्रकार मिथ्यात्व और रागादि से युक्त अज्ञानी जीव कर्म पुद्गलों से भरे इस लोक में मन–वचन–काय संबंधी चेष्टायें करता हुआ अनेकप्रकार के सचित्त–अचित्त द्रव्यों का घात करता दिखाई देता है; तथापि उसको होनेवाले कर्मबंध का कारण मिथ्यात्व और रागादि भाव ही हैं, कार्माण–वर्गणायें, मन–वचन–काय की चेष्टा और चेतन–अचेतन का उपघात नहीं।

एक व्यक्ति ने गोली चलाई और उससे एक आदमी मर गया। इस घटना का गहराई में जाकर विश्लेषण करें तो इसमें तीन बिन्दु सामने आते हैं –

1. गोली चलने और उससे आदमी के मरनेरूप क्रिया।

2. गोली चलानेवाले के हृदय में उत्पन्न उक्त व्यक्ति को मारने का भाव।

3. 'मैं दूसरों को मार–जिला सकता हूँ' अज्ञानी की ऐसी मान्यता।

मानलो गोली चलानेवाले उक्त अज्ञानी व्यक्ति को सबकुछ मिलाकर एक किलो पाप लगा।

उक्त पापबंध को उक्त तीनों बिन्दुओं में बाँटे और विचार करें कि किससे कितना पाप लगा होगा।

यदि इस दुनियाँ से पूँछो तो दुनियाँ तो यही उत्तर देगी कि पूरा एक किलो पाप व्यक्ति के मरने के कारण ही लगा; क्योंकि यदि व्यक्ति नहीं मरता तो फिर गोली चलानेवाले पर केस ही नहीं बनता, मुकुदमा ही नहीं चलता; क्योंकि जगत की दृष्टि में तो अपराध हुआ ही नहीं है।

'मैं दूसरों को मार सकता हूँ' – इस मान्यता एवं दूसरों को मारने के भाव को तो यह जगत अपराध मानता ही नहीं है, पाप मानता ही नहीं है।

उक्त संदर्भ में जैनदर्शन का कहना यह है कि मरनेरूप क्रिया का एक ग्राम भी पाप नहीं; क्योंकि एक द्रव्य की क्रिया का कर्ता कोई दूसरा द्रव्य है ही नहीं, वह तो अपनी आयु की समाप्ति से ही मरा है।

यदि गोली चूक जाती और वह व्यक्ति नहीं मरता, तब भी एक किलो ही पाप लगने वाला था, 999 ग्राम नहीं; क्योंकि मारने का अभिप्राय व मारने का भाव दोनों ही हो गए थे।

जैनदर्शन में तो कृत–कारित–अनुमोदना का फल बराबर ही कहा है। देखो कितना अन्तर है जगत की मान्यता और जैनदर्शन की मान्यता में। जगत कहता है कि पूरा फल क्रिया का ही लगता है और जैनदर्शन कहता है कि क्रिया का रंचमात्र भी फल नहीं होता, पूरा फल मान्यता और भावों का ही लगता है।

देखो यह समयसार की अद्भुत बात। जिसप्रकार रजबंध का कारण चिकनाई ही है; उसीप्रकार बंध का कारण मूलतः मिथ्यात्व ही है, राग ही है; बाह्य पदार्थ बंध के कारण नहीं हैं।

अब मान्यता और भाव में बंटवारा करते हैं।

मारने के परिणाम के कारण मात्र एक ग्राम बंध हुआ। 999 ग्राम बंध मिथ्या मान्यता के कारण हुआ। अब जगत कहता है कि ये तो अन्याय है, पर मैं कहता हूँ, मैंने तो मात्र हजारवाँ भाग ही कहा है, शास्त्रों में तो अनन्तवाँ भाग लिखा है।

आगम में 'मैं किसी अन्य को मार सकता हूँ' – इस मिथ्या मान्यता का बंध अनन्तगुणा और मारने के भाव का बंध अनन्तवाँ भाग कहा है।

करणानुयोग के शास्त्रों में साफ–साफ लिखा है कि दर्शन– मोहनीय और चारित्रमोहनीय की अनन्तानुबंधी क्रोध ा–मान–माया–लोभ व नरकादि गतियाँ तो मिथ्यात्व अर्थात् विपरीत मान्यता के कारण ही बंधती हैं।

'तुम किसी को सुखी–दुखी नहीं कर सकते, मार–बचा नहीं सकते' – इस बात की चर्चा समयसार के बंधाधिकार में अत्यन्त स्पष्ट शब्दों में की है; जिसका सार इसप्रकार है –

निज आयु क्षय से मरण हो, यह बात जिनवर ने कही।
तुम मार कैसे सकोगे, जब आयु हर सकते नहीं।।

इसमें स्पष्ट लिखा है कि तुम मार ही नहीं सकते; क्योंकि उसके आयुकर्म के क्षय से उसका मरण होता है और तुम आयुकर्म का क्षय कर नहीं सकते।

निज आयु से जीवित रहें, यह बात जिनवर ने कही।
तुम बचा कैसे सकोगे, जब आयु दे सकते नहीं।।

आज तक ऐसी कोई गोली नहीं बनी है, जिससे उसका आयुकर्म बढ़ जाये तो फिर तुम उसे किसप्रकार बचा सकते हो ?

इसप्रकार जब तुम किसी को मार नहीं सकते, बचा नहीं सकते तो फिर उस क्रिया का फल तुम्हें कैसे लगेगा ? लेकिन मारने का भाव तुमने किया है; इसलिए इसका फल तुम्हें लगेगा। 'मैं मार सकता हूँ' – ऐसी झूठी मान्यता तुमने की है, इसलिए इसका फल तुम्हें लगेगा।

बंध की प्रक्रिया को समझाते हुए बनारसीदासजी भी लिखते हैं –

कर्मजाल–वर्गना सौं जग मैं न बंधै जीव,
बंधै न कदापि मन–वच–काय–जोग सौं।
चेतन अचेतन की हिंसा सौं न बंधै जीव,
बंधै न अलख पंच–विषै–विष रोग सौं।।
कर्म सौं अबंध सिद्ध जोग सौं अबंध जिन,
हिंसा सौं अबंध साधु ग्याता विषै–भोग सौं।
इत्यादिक वस्तु के मिलाप सौं न बंधै जीव,
बंधै एक रागादि असुद्ध उपयोग सौं।।

सारी दुनिया तो यही मानती है कि हम कर्मों से बंधे हैं; किन्तु समयसार की 14 वीं गाथा में लिखा है कि कर्मों ने आत्मा को छुआ तक नहीं है; बंधना तो बहुत दूर की बात है।

उक्त छन्द में चार उदाहरण दिये हैं –

1. कर्म सौं अबंध सिद्ध 2. जोग सौं अबंध जिन
3. हिंसा सौं अबंध साधु 4. ग्याता विषै भोग सौं

यदि कर्मों से आत्मा बंधता हो, तो सिद्धशिला में भी कार्माण वर्गणाएँ ठसाठस भरी हैं और वहाँ उसी क्षेत्र में अनन्त सिद्ध भी हैं। जहाँ सिद्ध हैं, उसी अवगाहना में कार्माण वर्गणाएँ हैं। यदि उनसे कोई बंधता होता तो सिद्धों को भी बंधना चाहिए।

मन–वचन–काय की चंचलता से भी नहीं बंधते हैं; क्योंकि अरहंत भगवान का योग हमसे भी ज्यादा होता है; तथापि उनके बंध नहीं होता है।

अब कहते हैं कि चेतन–अचेतन की हिंसा से भी जीव नहीं बंधता है। मुनिराज ईयासमितिपूर्वक चल रहे हैं। वे चार हाथ जमीन देखकर चलते हैं; परन्तु जो जीव चार हाथ दूर से दिखाई ही नहीं देते, वे तो उनके पैरों के नीचे आकर मरते ही हैं।

मुनिराज स्नान नहीं करते, दातुन नहीं करते और वहाँ कीटाणु पैदा हो जायें तो वे मरते हैं; तब भी मुनिराज को बंध नहीं होता है। यदि उससे बंध होता, तो उन्हें बंध होना चाहिए।

पाँच इन्द्रियों के विषय भोगने से भी यह आत्मा बंध को प्राप्त नहीं होता और यदि बंधता होता तो भरतचक्रवर्ती जैसे अविरत सम्यग्दृष्टि को भी बंधना चाहिए था; पर निर्जरा अधिकार में यह कहा है कि उनके तो असंख्यात गुणी निर्जरा होती है, बंध नहीं होता है। सम्यग्दृष्टि विषयभोगों में रहता है, तो भी मिथ्यात्वादि का बंध नहीं होता।

इसी बात को स्पष्ट करते हुए बनारसीदासजी लिखते हैं –

कर्मजाल–वर्गना कौ वास लोकाकास मांहि,
मन–वच–काय कौ निवास गति आउ मैं।
चेतन अचेतन की हिंसा बसै पुग्गल मैं,
विषै–भोग वरतै उदै के उरझाउ मैं।।
रागादिक सुद्धता असुद्धता है अलख की,
यहै उपादान हेतु बंध के बढ़ाउ मैं।
याही तैं विचच्छन अबंध कह्यौ तिहूं काल,
राग दोष मोह नाहीं सम्यक सुभाउ में।।

पौद्गलिक कार्माण वर्गणायें तो लोकाकाश में रहती हैं, मन–वचन–काय गति और आयु कर्म के उदय में होते हैं, चेतन–अचेतन संबंधी हिंसा पुद्गलरूप शरीर के वियोग का नाम है और पंचेन्द्रियों के विषयभोग कर्मोदय की उलझन में होते हैं। इसप्रकार इन सबका आवास आत्मा में नहीं है; किन्तु रागादिभावों रूप अशुद्धता और वीतरागतारूप शुद्धता आत्मा की अवस्थायें हैं; अतः रागादिरूप अशुद्धता ही आत्मा के बंध का उपादान कारण है। यही कारण है कि सम्यग्दृष्टि पुरुषों को तीनों काल अबंध कहा है; क्योंकि आत्मा के सम्यक्स्वभाव में मोह–राग–द्वेष भाव हैं ही नहीं।

निश्चय से तो प्रत्येक वस्तु स्वयं में ही रहती है; पर व्यवहार से यह कहा जाता है कि कार्माण वर्गणायें लोकाकाश में रहती हैं। यही कारण है कि कार्माण वर्गणायें, मन–वचन–काय, चेतन–अचेतन की हिंसा और विषयभोग बंध के करण नहीं है; बंध के कारण तो रागादिभाव ही हैं।

आगे कहा है कि राग दोष मोह नाहीं सम्यक् सुभाउ में आत्मा का जो सम्यक् स्वभाव है, उसमें राग–द्वेष–मोह है ही नहीं। यहाँ सम्यक् रूप परिणमन स्वभाव की बात है। राग–द्वेष जुदे हैं और सम्यक् परिणमन जुदा है; इसलिए ज्ञानी के बंध नहीं है।

बंध के कारण मिथ्यात्वादि रागादिभाव हैं और कोई बंध का कारण नहीं।

सारे जगत ने क्रिया को ही बंध का कारण मान रखा है श्रीमद् जी के शब्दों में केई क्रियाजड़ थई रहा, शुष्क ज्ञान में केई। बहुत से लोग तो क्रियाजड़ हो रहे हैं।

तात्पर्य यह है कि क्रिया से ही पुण्य मानते हैं, क्रिया से ही पाप मानते हैं और क्रिया से ही धर्म मानते हैं।

पुण्य, पाप और धर्म ये सभी चैतन्य के परिणाम हैं; अतः ये चैतन्य में होंगे और चैतन्य के बंध के कारण भी ये ही हो सकते हैं; अन्य द्रव्य नहीं। जब एक द्रव्य दूसरे द्रव्य का कर्ता–धर्ता है ही नहीं, तो फिर हम कैसे माने कि एक द्रव्य ने दूसरे द्रव्य को बांधा।

आत्मा के बंधन संबंधी यही संक्षिप्त कथन है।(**क्रमशः**)

रजिस्ट्रेशन आर. एन. आई. 31109/77

डॉ. भारिल्ल का 2003 में विदेश कार्यक्रम

डॉ. हुकमचन्दजी भारिल्ल प्रतिवर्ष की भाँति इस वर्ष भी धर्मप्रचारार्थ विदेश जा रहे हैं। अमेरिका की यह उनकी 20 वीं विदेश यात्रा है। उनका नगरवार कार्यक्रम निम्नानुसार है। जिन भारतवासी बन्धुओं के परिवार या सम्बन्धी निम्नस्थानों पर रहते हों, उन्हें वे सूचित कर दें। उनकी सुविधा के लिए उन लोगों के फोन एवं फैक्स नम्बर भी दिये जा रहे हैं, जिनके यहाँ डॉ. भारिल्ल ठहरेंगे।

क्र.	शहर	सम्पर्क-सूत्र	दिनांक
1.	डलास	अतुल खारा (घर) 972-867-6535 (ऑ.)972-424-4902 (फै.)972-424-0680 E-mail : insty@airmail.net	20 से 25 जून
2.	शिकागो	निरंजन शाह 847-330-1088 डॉ. विपिन भायाणी (घर) 815-939-0056 (ऑ.)815-939-3190 (फै.) 815-939-3159	26 जून से 30 जून
3.	सिनसिनाटी	विजय दोशी (घर) 513-779-2112 अतुल खारा (घर) 972-867-6535 महेन्द्र शाह (घर) 305-595-3833	1जुलाई से 5 जुलाई
4.	वाशिंगटन डी.सी.	नरेन्द्र जैन (घर) 703-426-4004 (फैक्स) 703-321-7744 रजनीभाई गोसालिया (घर) 301-464-5947 (ऑ.) 202-529-2140	6 से 10 जुलाई
5.	ह्यूस्टन	भूपेश सेठ (घर) 281-261-4030 (ऑ.)713-339-3778 प्रतिमा देसाई (घर) 281-859-3661	11 से 15 जुलाई
6.	मियामी	महेन्द्र शाह (घर) 305-595-3833 (ऑ.)305-371-2149 E-mail : bhitap@bellsouth.net	16 से 21जुलाई

पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री का विदेश कार्यक्रम

डॉ. हुकमचंदजी भारिल्ल की तरह उन्हीं के शिष्य पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री छिंदवाड़ा भी धर्मप्रचारार्थ दिनांक 30 मई से 14 जुलाई 2003 तक अमेरिका जा रहे हैं। उनका वहाँ कार्यक्रम इसप्रकार है ह्न 30 मई को दिल्ली से प्रस्थान करके 5 जून तक डिट्रोयेट, 6 जून से 11 जून तक मियामी, 12 जून से 18 जून तक शिकागो, 19 जून से 24 जून तक सियेटल, 25 जून से 30 जून तक वाशिंगटन, 1 जुलाई से 6 जुलाई तक सिनसिनाटी, 7 जुलाई से 14 जुलाई तक डलास। अमेरिका प्रवास के दौरान जिन स्थानों पर डॉ. भारिल्ल ठहरेंगे, उन्हीं स्थानों पर पण्डित अभयकुमारजी शास्त्री भी ठहरेंगे। डिट्रोयेट और सियेटल ही दो स्थान हैं, जहाँ डॉ. भारिल्ल नहीं जा रहे है; अत: वहाँ पण्डित अभयकुमारजी से निम्न स्थान पर सम्पर्क किया जा सकता है ह्न

डिट्रोयेट- अनंत कोरडिया - 248-681-1333

सियेटल ह्न प्रकाश जैन - (नि.) 425-881-6143 (ऑ.) 425-707-5308

मई माह में आनेवाली 24 तीर्थंकरों के पंचकल्याणकों की तिथियाँ

02 मई - कुन्थुनाथ का जन्म, तप एवं मोक्ष कल्याणक
07 मई - अभिनन्दननाथ का गर्भ एवं मोक्ष कल्याणक
10 मई - सुमतिनाथ का तपकल्याणक
11 मई - महावीर का ज्ञान कल्याणक
21 मई - श्रेयांसनाथ का गर्भकल्याणक
25 मई - विमलनाथ का गर्भकल्याणक
27 मई - अनंतनाथ का जन्म एवं तप कल्याणक
29 मई - शान्तिनाथ का जन्म, तप एवं मोक्ष कल्याणक
31 मई - मुनिसुव्रतनाथ का जन्म एवं तप कल्याणक

छात्रवृत्ति वर्ष 2003 - 2004 के लिये आवेदन

टाइम्स ऑफ इण्डिया ग्रुप की लोकोपकारी संस्था साहू जैन ट्रस्ट ने वर्ष 2003-04 में भारत एवं विदेशों में उच्च शिक्षा के लिए छात्रवृत्ति देने की घोषणा की है।

भारत में तकनीकी, इंजीनियरिंग, कम्प्यूटर, मेडिकल, स्नातक, स्नातकोत्तर आदि शिक्षा के लिए 150/- रुपये से 1000/- रुपये मासिक तक की छात्रवृत्ति के लिए 20 जुलाई तक आवेदन पत्र मंगाकर 30 जुलाई तक जमा करना होगा।

विदेशों में भारतीय मूल के प्रतिभाशाली छात्रों को तकनीकी विषयों की उच्च शिक्षा के लिए आसान किस्तों पर एक लाख रुपये तक का रिफन्डेबल ऋण दिया जायेगा। इसके लिये 20 मई, 2003 तक आवेदन भेजना होगा।

इच्छित छात्र-छात्राएं आवेदन-पत्र मंगाने के लिए 9''ह्न 4'' का स्वयं का पता लिखा, 5/- रुपये का स्टाम्प लगा लिफाफा निम्न पते पर भेजें - सोमचंद्र जैन, सचिव
साहू जैन ट्रस्ट, 7 बहादुर शाह जफर मार्ग, नई दिल्ली -2

जैनपथप्रदर्शक (पाक्षिक) मई (प्रथम) 2003
J.P.C. 3779/02/2003-05

प्रति,

सम्पादक : **पण्डित रतनचन्द भारिल्ल** शास्त्री, न्यायतीर्थ, साहित्यरत्न, एम.ए., बी.एड.
प्रबन्ध सम्पादक : **पण्डित संजीवकुमार गोधा जयपुर**, एम.ए. (जैनविद्या एवं तुलनात्मक धर्मदर्शन)
प्रकाशक एवं मुद्रक : **ब्र. यशपाल जैन** द्वारा जैनपथप्रदर्शक समिति के लिए जयपुर प्रिण्टर्स प्रा.लि., एम. आई. रोड, जयपुर से मुद्रित तथा त्रिमूर्ति कम्प्यूटर्स, ए-4, बापूनगर, जयपुर से प्रकाशित।

यदि न पहुँचे तो कृपया निम्न पते पर भेजें -
ए- 4 बापूनगर, जयपुर - 302015 (राज.)
फोन : (0141) 2705581, 2707458
तार : त्रिमूर्ति, जयपुर **फैक्स :** 2704127